प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

द्वितीय अपील संख्या: 236 /2019

हरिचरण, आत्मज पूरन, आयु लगभग 70 वर्ष, निवासी ग्राम पोरडा, तहसील घरघोड़ा, जिला रायगढ़, छत्तीसगढ़।

----अपीलार्थी

बनाम

1. गोविंद, आत्मज बरतराम आयु लगभग 43 वर्ष, निवासी ग्राम हीरापुर, तहसील लैलूंगा, जिला रायगढ़, छत्तीसगढ़। (वादी क्रमांक 1)
2. संकीर्तन, आत्मज बरतराम आयु लगभग 40 वर्ष, निवासी ग्राम हीरापुर, तहसील लैलूंगा, जिला रायगढ़, छत्तीसगढ़। (वादी क्रमांक 2)
3. कौशल्या, पति स्व. बुटुराम उर्फ संतराम, आयु लगभग 65 वर्ष, निवासी ग्राम पोरडा, तहसील घरघोड़ा, जिला रायगढ़, छत्तीसगढ़। (प्रतिवादी क्रमांक 2)
4. छत्तीसगढ़ राज्य, द्वारा कलेक्टर, रायगढ़, जिला रायगढ़, छत्तीसगढ़। (प्रतिवादी क्रमांक 3)

----प्रत्यर्थीगण

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

अपीलार्थी हेतु:	मधुनिषा सिंह, अधिवक्ता की ओर से अदिति जोशी, अधिवक्ता
प्रत्यर्थी क्र.1 एवं 2 हेतु:	श्री संदीप पटेल, अधिवक्ता।
राज्य/प्रत्यर्थी क्र.4 हेतु:	श्री कल्पेश रूपारेल, पैनल लॉयर।

एकल पीठ: माननीय श्री न्यायमूर्ति पार्थ प्रतीम साहू

बोर्ड पर निर्णय

24/09/2025

1. यह द्वितीय अपील अपीलार्थी/प्रतिवादी द्वारा विद्वान अपर जिला न्यायाधीश, घरघोड़ा, जिला रायगढ़ द्वारा सिविल अपील संख्या 05/2018 में पारित आक्षेपित निर्णय एवं डिक्री दिनांक 15.02.2019 को चुनौती देते हुए दायर की गई है, जिसके द्वारा विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय ने विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय एवं डिक्री को अपास्त कर दिया है और मामले को विचारण हेतु प्रतिप्रेषित किया है।

2. अपीलार्थी/प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि खसरा नंबर 263/2 और 278/1, जिसका क्षेत्रफल क्रमशः 0.210 हेक्टेयर और 0.202 हेक्टेयर है, की भूमि के स्वत्व की घोषणा और आधिपत्य हेतु प्रत्यर्थी क्रमांक 1 एवं 2/वादियों द्वारा दायर वाद की सूचना प्राप्त

होने के उपरांत, प्रतिवादियों ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश VII नियम 11 के तहत इस आधार पर एक आवेदन प्रस्तुत किया कि सिविल वाद की विषय–वस्तु वाली भूमि को पहले ही साउथ ईस्टर्न कोलफील्ड्स लिमिटेड द्वारा अधिग्रहित किया जा चुका है। अतः, कोयला धारक क्षेत्र (अर्जन और विकास) अधिनियम, 1957 (संक्षेप में "1957 का अधिनियम") के तहत अधिग्रहित संपत्ति के स्वत्व से संबंधित किसी भी विवाद पर केवल सक्षम प्राधिकारी द्वारा विचार किया जाएगा, न कि क्षेत्राधिकार संपन्न सिविल न्यायालय द्वारा, जैसा कि 1957 के अधिनियम की धारा 26 के तहत परिकल्पित है। विद्वान विचारण न्यायालय ने आवेदन में दिए गए आधारों और वाद–पत्र में किए गए कथनों के परिशीलन के उपरांत, सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश VII नियम 11 (d) के तहत वाद को खारिज कर दिया था, जो कि तथ्यों और मामले में लागू कानून के उचित मूल्यांकन पर आधारित था। उन्होंने तर्क दिया कि विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय ने 1957 के अधिनियम की धारा 14 (2) पर संज्ञान लेते हुए त्रुटिपूर्ण रूप से यह निष्कर्ष निकाला कि केंद्र सरकार ने स्वत्व के दावे का निर्णय करने के लिए किसी व्यक्ति या प्राधिकारी को अधिकृत नहीं किया है। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय एवं डिक्री विधि के विरुद्ध है, अतः इसे अपास्त किया जाए।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

3. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी क्रमांक 1 एवं 2/वादियों के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि विद्वान विचारण न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश VII नियम 11 (d) के तहत वाद को खारिज किया है। आदेश VII नियम 11 (d) के प्रावधानों की शब्दावली के अनुसार, यह विचार करने के लिए कि क्या दायर सिविल वाद किसी कानून द्वारा वर्जित है, केवल वाद–पत्र की अंतर्वस्तु/वाद–पत्र में किए गए कथनों पर ही विचार किया जाना चाहिए। न्यायालय को आदेश VII नियम 11 (d) के तहत वाद को खारिज करने के लिए साक्ष्य के रूप में किसी अन्य दस्तावेज पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है। अपने तर्क के समर्थन में, उन्होंने 'छोटनबेन एवं अन्य बनाम किरीटभाई जलकृष्णभाई ठक्कर एवं अन्य (2018) 6 SCC 422' के मामले में दिए गए निर्णय का अवलंब लिया है।

4. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है तथा विचारण न्यायालय के अभिलेख का भी परिशीलन किया है।

5. वाद–पत्र के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि वादियों/प्रत्यर्थी क्रमांक 1 एवं 2 ने वाद–पत्र में यह अभिकथन किया है कि तीन खसरा नंबरों, अर्थात 263/2, 278/1 और 282/2 में से, केवल खसरा नंबर 282/2 को एस. ई. सी. एल. द्वारा अधिग्रहित किया गया था। इस आशय का कोई अभिकथन नहीं है कि अन्य खसरा नंबर, जिन पर सहायता का दावा किया गया है, वे भी

द्वारा अधिग्रहित किए गए हैं। वाद–पत्र में किए गए अभिवचनों के मात्र अवलोकन से यह प्रतीत नहीं होता है कि सहायता खंड की विषय–वस्तु वाली भूमि कभी एस. ई. सी. एल. द्वारा अधिग्रहित की गई थी और वादी किसी भी कारण से एस. ई. सी. एल. द्वारा अधिग्रहित कही जाने वाली भूमि पर स्वत्व की घोषणा की मांग कर रहे हैं। इसके विपरीत, वे हरिचरण, बुटुराम और बरतराम द्वारा त्याग दिए गए अधिकारों के आधार पर स्वत्व का दावा कर रहे हैं, क्योंकि दो भाइयों अर्थात हरिचरण और बुटुराम ने विवादित संपत्ति को बरतराम के पक्ष में विक्रय कर दिया था।

6. सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश VII नियम 11 (d) के तहत प्रावधान इस प्रकार है:

> "11. वाद–पत्र का नामंजूर किया जाना– निम्नलिखित मामलों में वाद–पत्र नामंजूर कर दिया जाएगा :–
>
> (a) x x x
>
> (b) x x x
>
> (c) x x x
>
> d) जहाँ वाद–पत्र में किए गए कथन से यह प्रतीत होता है कि वाद किसी विधि द्वारा वर्जित है;
>
> x x x

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

7. स्वयं इस प्रावधान का परिशीलन यह स्पष्ट करता है कि आदेश VII के नियम 11 (d) के तहत वाद–पत्र की नामंजूरी पर विचार करने के लिए केवल वाद–पत्र में किए गए अभिकथन पर ही विचार किया जाना है कि वाद किसी विधि द्वारा वर्जित है या नहीं।

8. माननीय उच्चतम न्यायालय ने छोटनबेन (पूर्वोक्त) के मामले में निम्नानुसार व्यवस्था दी है:

> "15. व्य. प्र. सं. के आदेश 7 नियम 11 (d) के तहत आवेदन के संदर्भ में विचाराधीन मामले का उत्तर देने के लिए जो प्रासंगिक है, वह वाद–पत्र में किए गए अभिकथनों की जांच करना है। वाद–पत्र को समग्र रूप से पढ़ा जाना आवश्यक है। प्रतिवादियों को उपलब्ध बचाव या उनके द्वारा लिखित कथन में लिया गया तर्क या उनके द्वारा दायर किया गया कोई भी आवेदन, आदेश 7 नियम 11 (d) के तहत आवेदन का निर्णय करने का आधार नहीं हो सकता। केवल वाद–पत्र के अभिकथन ही सुसंगत

हैं। यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि पंजीकृत विक्रय विलेख दिनांक 18–10–1996 का है। पंजीकृत विक्रय विलेख को चुनौती देने की परिसीमा सामान्यतः उस तारीख से शुरू होगी जिस दिन विक्रय विलेख पंजीकृत किया गया था। यद्यपि , अपीलार्थी–वादियों का विशिष्ट मामला यह है कि वर्ष 2013 तक उन्हें अपने भाइयों, मूल प्रतिवादी 1 और 2 द्वारा, जयकृष्णभाई प्रभुदास ठक्कर या प्रतिवादी 3 से 6 के पक्ष में निष्पादित ऐसे विक्रय विलेख के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। उन्हें इसकी जानकारी 26–12–2012 को हुई और उन्होंने तुरंत पंजीकृत विक्रय विलेख की प्रमाणित प्रति प्राप्त करने के लिए कदम उठाए और उसकी प्राप्ति पर उन्हें अपने भाइयों द्वारा पैतृक संपत्ति के संबंध में उनके साथ की गई धोखाधड़ी का एहसास हुआ। वाद दायर करने से दो दिन पहले, उन्होंने अपने भाइयों (मूल प्रतिवादी 1 और 2) से संपर्क किया और उन्हें अपने आधिपत्य में हस्तक्षेप बंद करने तथा संपत्ति का विभाजन करने और उनके हिस्से के रूप में नामित भूमि के आधे (1/2) हिस्से का अनन्य कब्जा प्रदान करने के लिए कहा। यद्यपि , जब उन्हें अहसास हुआ कि मूल प्रतिवादी 1 और 2 उनकी प्रार्थना पर कोई ध्यान नहीं देंगे, तो उनके पास कानून की अदालत का दरवाजा खटखटाने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा और उन्होंने उसके दो दिन के भीतर संबंधित वाद दायर कर दिया। अपीलार्थियों के अनुसार, पंजीकृत विक्रय विलेख के निष्पादन के बारे में जानकारी प्राप्त होने के बाद वाद समय सीमा के भीतर दायर किया गया है। इस संदर्भ में, विचारण न्यायालय की यह राय थी कि यह एक विचारणीय मुद्दा था और उसने आदेश 7 नियम 11 (d) के तहत वाद–पत्र को नामंजूर करने के लिए प्रतिवादी 5 द्वारा दायर आवेदन को स्वीकार करने से इनकार कर दिया। वह दृष्टिकोण हमें उचित प्रतीत होता है।"

"16. दूसरी ओर, उच्च न्यायालय ने अनुमानों और अटकलों के आधार पर मामले पर विचार किया है और वाद–पत्र में किए गए अभिकथनों का विश्लेषण करने का कष्ट तक नहीं किया, यद्यपि उसने 19 कंडिकाओं का एक सकारण आदेश पारित किया है। उसने एक कंडिका में मुद्दे का उत्तर

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

देने का प्रयास किया है जिसे यहाँ (कंडिका 10 में) उद्धृत किया गया है। दूसरी ओर, विचारण न्यायालय का दृष्टिकोण 'सलीम भाई बनाम महाराष्ट्र राज्य' [(2003) 1 SCC 557], 'मयार (एच.के.) लिमिटेड बनाम वेसल एम.वी. फॉर्च्यून एक्सप्रेस' [(2006) 3 SCC 100] और 'टी. अरिवंदनम बनाम टी.वी. सत्यपाल' [(1977) 4 SCC 467] में प्रतिपादित स्थापित कानूनी स्थिति के अनुरूप था।"

17. इन निर्णयों को 'चर्च ऑफ क्राइस्ट चैरिटेबल ट्रस्ट एंड एजुकेशनल चैरिटेबल सोसाइटी बनाम पोन्नियम्मन एजुकेशनल ट्रस्ट' [(2012) 8 SCC 706] के मामले में संज्ञान में लिया गया है, जहाँ इस न्यायालय ने कंडिका 11: (SCC पृष्ठ 714, कंडिका 11) में इस प्रकार अवधारित किया है:

"11. इस स्थिति को इस न्यायालय द्वारा 'सलीम भाई बनाम महाराष्ट्र राज्य' [(2003) 1 SCC 557] के मामले में स्पष्ट किया गया था, जिसमें संहिता के आदेश 7 नियम 11 पर विचार करते हुए निम्नानुसार व्यवस्था दी गई थी:

'9. व्य. प्र. सं. के आदेश 7 नियम 11 के परिशीलन से यह स्पष्ट होता है कि इसके तहत किसी आवेदन का निर्णय करने के लिए जिन प्रासंगिक तथ्यों पर गौर करने की आवश्यकता है, वे वाद–पत्र में किए गए अभिकथन हैं। विचारण न्यायालय वाद के किसी भी चरण में—वाद–पत्र दर्ज करने से पहले या प्रतिवादी को समन जारी करने के बाद, विचारण की समाप्ति से पहले किसी भी समय—आदेश 7 नियम 11 व्य. प्र. सं. के तहत शक्ति का प्रयोग कर सकता है। आदेश 7 नियम 11 के खंड (a) और (d) के तहत आवेदन का निर्णय करने के प्रयोजनों के लिए, वाद–पत्र के अभिकथन ही सुसंगत हैं; उस चरण में प्रतिवादी द्वारा लिखित कथन में लिए गए तर्क पूर्णतः अप्रासंगिक होंगे, इसलिए, आदेश 7 नियम 11 व्य. प्र. सं. के तहत आवेदन का निर्णय किए बिना लिखित कथन दाखिल करने का निर्देश देना विचारण न्यायालय द्वारा क्षेत्राधिकार के प्रयोग से संबंधित एक प्रक्रियात्मक अनियमितता के अलावा और कुछ नहीं है।'

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

यह स्पष्ट है कि आदेश 7 नियम 11 पर विचार करने के लिए, न्यायालय को वाद–पत्र के कथनों को देखना होगा और विचारण न्यायालय द्वारा वाद के किसी भी चरण में इसका प्रयोग किया जा सकता है। यह भी स्पष्ट है कि लिखित कथन के अभिकथन महत्वहीन हैं और यह न्यायालय का कर्तव्य है कि वह वाद–पत्र के कथनों/तर्कों की सूक्ष्म जांच करे। दूसरे शब्दों में, ऐसे आवेदन का निर्णय करने में वाद–पत्र के कथनों को ही देखा जाना चाहिए। उस स्तर पर, प्रतिवादी द्वारा लिखित कथन में लिए गए तर्क पूरी तरह से अप्रासंगिक हैं और मामले का निर्णय केवल वाद–पत्र के कथनों के आधार पर किया जाना है।"

9. वाद–पत्र के परिशीलन से यह दर्शित होगा कि यह प्रतिवादियों, अर्थात एक निजी व्यक्ति और राज्य के विरुद्ध स्वत्व की घोषणा और आधिपत्य के लिए दायर किया गया है। यह अभिकथन किया गया है कि वाद में वर्णित कुल भूमि में से, जिसके एक भाग अर्थात 58 डेसिमल भूमि पर वादी का अधिकार और स्वत्व है। वाद–पत्र के अभिवचनों से यह प्रतीत नहीं होता है कि जिस वाद भूमि का दावा किया गया है, वह अधिग्रहित है या उसका अधिग्रहण विवादित है। विद्वान विचारण न्यायालय ने वाद–पत्र के कथनों पर आंशिक रूप से विचार किया और व्य. प्र. सं. के आदेश 7 नियम 11 (d) के तहत आवेदन के कथनों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि वाद 1957 के अधिनियम की धारा 26 से बाधित है। यह स्पष्ट नहीं है कि क्या वह संपूर्ण भूमि, जिसके विरुद्ध सहायता का दावा किया गया है, अर्जन कार्यवाही के अधीन थी; जिसे केवल विचारण के बाद ही सुनिश्चित किया जा सकता है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

10. मामले के तथ्यों में, प्रतिवादियों द्वारा जो मुद्दा उठाने का प्रयास किया गया है, उसे उनके द्वारा दाखिल किए जाने वाले लिखित कथन में भली–भांति उठाया जा सकता है और यह विद्वान विचारण न्यायालय का कार्य है कि वह वाद–पत्र और लिखित कथन में किए गए अभिवचनों पर विचार करते हुए विवाद के विषय–वस्तु वाले सभी बिंदुओं पर विवाद्यक विरचित करे और तत्पश्चात संबंधित पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर लाए जाने वाले साक्ष्यों के आधार पर उन विवाद्यकों का निर्णय करे।

11. द्वितीय अपील केवल तभी स्वीकार की जानी चाहिए जब उसमें विधि का कोई सारवान प्रश्न निहित हो। यद्यपि अपील में अपीलार्थी ने कुछ प्रश्नों को विधि के सारवान प्रश्न के रूप में प्रस्तावित किया है, तथापि इसके मात्र अवलोकन से यह दर्शित होता है कि तथ्यों और साक्ष्यों का पुनर्मूल्यांकन कराने का प्रयास किया गया है, जो व्य. प्र. सं. की धारा 100 के तहत दायर अपील

में तब तक अनुमेय नहीं है जब तक कि यह न कहा जाए कि अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा दर्ज किया गया निष्कर्ष अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के प्रतिकूल है।

12.माननीय उच्चतम न्यायालय ने 'राजस्थान राज्य एवं अन्य बनाम शिव दयाल एवं अन्य' (2019) 8 SCC 637 के मामले में इस प्रकार अवधारित किया है:

> "14. यह सत्य है, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा कई निर्णयों में निर्धारित किया गया है, कि सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के तहत द्वितीय अपील की सुनवाई के दौरान 'तथ्यों का समवर्ती निष्कर्ष' आमतौर पर उच्च न्यायालय पर बंधनकारी होता है। यद्यपि , विधि का यह नियम नीचे उल्लिखित कुछ सुपरिचित अपवादों के अधीन है।"
>
> 15. यह एक सुस्थापित विधि है कि तथ्यों पर कोई भी निष्कर्ष दर्ज करने के लिए, विचारण न्यायालय को पक्षकारों के अभिवचनों के आलोक में संपूर्ण साक्ष्य (मौखिक और दस्तावेजी) का मूल्यांकन करना आवश्यक है। इसी प्रकार, यह भी एक सुस्थापित विधि है कि अपीलीय न्यायालय के पास प्रथम अपील की सुनवाई के दौरान साक्ष्य का नए सिरे से मूल्यांकन करने और विचारण न्यायालय के निष्कर्ष की या तो पुष्टि करने या उसे उलटने का क्षेत्राधिकार है। यदि अपीलीय न्यायालय निष्कर्ष की पुष्टि करता है, तो इसे "तथ्यों का समवर्ती निष्कर्ष" कहा जाता है, जबकि यदि निष्कर्ष को उलट दिया जाता है, तो इसे "व्युत्क्रम निष्कर्ष" कहा जाता है। विधिक शब्दावली में ये अभिव्यक्तियाँ सुविख्यात हैं।
>
> 16. जब द्वितीय अपील में तथ्यों के किसी समवर्ती निष्कर्ष को चुनौती दी जाती है, तो अपीलार्थी यह बताने का हकदार होता है कि यह विधि की दृष्टि में दोषपूर्ण है क्योंकि यह अभिवचनों से परे दर्ज किया गया था, या यह किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं था, या यह महत्वपूर्ण दस्तावेजी साक्ष्य के गलत अर्थान्वयन पर आधारित था, या यह विधि के किसी प्रावधान के विरुद्ध दर्ज किया गया था, और अंततः, यह निर्णय ऐसा है जिस पर न्यायिक रूप से कार्य करने वाला कोई भी न्यायाधीश उचित रूप से नहीं पहुँच सकता था। (देखें विद्वान न्यायाधीश विवियन बोस, जे., जब वे नागपुर उच्च न्यायालय के न्यायाधीश थे, द्वारा 'दशरथ राजेश्वर विश्वनाथ मामिद्वार बनाम नारायण विश्वनाथ मामिद्वार चिलवेलकर' [1942 SCC OnLine MP 26 : AIR 1943 Nag 117] के कंडिका 43 में दी गई अवधारणा)।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

17. हमारी राय में, यदि उपरोक्त अनुसार कोई एक या अधिक आधार किसी उपयुक्त मामले में अभिवचन और साक्ष्य के आधार पर बनता है, तो ऐसा आधार संहिता की धारा 100 के अर्थ के भीतर 'विधि का सारवान प्रश्न' माना जाएगा।"

13.माननीय उच्चतम न्यायालय ने 'सी. डोड्डानारायण रेड्डी (मृत) विधिक प्रतिनिधियों के माध्यम से एवं अन्य बनाम सी. जयरामा रेड्डी (मृत) विधिक प्रतिनिधियों के माध्यम से एवं अन्य' (2020) 4 SCC 659 के मामले में निम्नानुसार अवधारित किया है:–

"25. विधि का सारवान प्रश्न उत्पन्न होता है या नहीं, यह इस न्यायालय द्वारा व्याख्या का विषय रहा है। 'कर्नाटक बोर्ड ऑफ वक्फ बनाम अंजुमन–ए–इस्माइल मदरिस–उन–निस्वान' [(1999) 6 SCC 343] के निर्णय में यह माना गया था कि द्वितीय अपील में तथ्यों के निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता था। इस न्यायालय ने निम्नानुसार व्यवस्था दी थी: (SCC पृ. 347–48, कंडिका 12–15)

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

'12. इस न्यायालय ने बार–बार यह कहा है कि व्य. प्र. सं. की धारा 100 के तहत द्वितीय अपील में हस्तक्षेप करने की उच्च न्यायालय की शक्ति केवल विधि के सारवान प्रश्न का निर्णय करने तक सीमित है, यदि वह मामले में उत्पन्न होता है। न्यायालय ने उच्च न्यायालयों की उस परिपाटी की निंदा की है जिसमें अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा प्राप्त तथ्यों के शुद्ध निष्कर्षों में नियमित रूप से हस्तक्षेप किया जाता है, बिना इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि तथ्यों का उक्त निष्कर्ष या तो दोषपूर्ण है या अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर आधारित नहीं है।

13. 'रामानुज नायडू बनाम वी. कन्हैया नायडू' [(1996) 3 SCC 392] में, इस न्यायालय ने माना: (SCC पृ. 393)

"अब यह सुस्थापित है कि विचारण न्यायालय और प्रथम अपीलीय न्यायालय के तथ्यों के समवर्ती निष्कर्षों में उच्च न्यायालय द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के तहत अपने क्षेत्राधिकार के प्रयोग में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है।

उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने धारा 100 के तहत द्वितीय अपील का निर्णय करने में अपने क्षेत्राधिकार के संबंध में पूर्णतः गलत धारणा बनाई।"

14. 'नवनीतममल बनाम अर्जुन चेट्टी' [(1996) 6 SCC 166] में, इस न्यायालय ने माना: (SCC पृ. 166)

"उच्च न्यायालय द्वारा धारा 100 व्य. प्र. सं. के तहत अधीनस्थ न्यायालयों के समवर्ती निष्कर्षों में हस्तक्षेप से तब तक बचा जाना चाहिए जब तक कि अनिवार्य कारणों से ऐसा करना आवश्यक न हो। किसी भी स्थिति में, उच्च न्यायालय से यह अपेक्षा नहीं की जाती है कि वह अधीनस्थ न्यायालयों के निष्कर्षों को बदलने के लिए साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करे। ... यहाँ तक कि यह मानते हुए भी कि उसी साक्ष्य के पुनर्मूल्यांकन पर दूसरा दृष्टिकोण संभव है, उच्च न्यायालय द्वारा ऐसा नहीं किया जाना चाहिए था क्योंकि यह नहीं कहा जा सकता कि प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा लिया गया दृष्टिकोण किसी सामग्री पर आधारित नहीं था।"

15. और पुनः 'तालीपरम्बा एजुकेशन सोसाइटी बनाम मूथेडथ मल्लिसेरी इल्लथ एम.एन.' [(1997) 4 SCC 484] में, इस न्यायालय ने माना: (SCC पृ. 486, कंडिका 5)

"5. ... उच्च न्यायालय ने धारा 100 व्य. प्र. सं. के तहत साक्ष्य के मूल्यांकन में हस्तक्षेप करने और तथ्यों के विपरीत निष्कर्ष दर्ज करने में भारी त्रुटि की है, जो कि अनुमेय नहीं है।"'

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

26. 'कोंडिबा दगडू कदम बनाम सावित्रीबाई सोपन गुजर' [(1999) 3 SCC 722] के एक निर्णय में, इस न्यायालय ने यह व्यवस्था दी कि यदि दी गई परिस्थितियों के किसी समूह से दो निष्कर्ष संभव हैं, तो अधीनस्थ अपीलीय न्यायालय द्वारा निकाला गया निष्कर्ष उच्च न्यायालय पर बंधनकारी होता है। उक्त मामले में, प्रथम अपीलीय न्यायालय ने विचारण न्यायालय के निर्णय को अपास्त कर दिया था। यह माना गया था कि उच्च न्यायालय हस्तक्षेप कर

सकता है यदि अधीनस्थ न्यायालय द्वारा निकाला गया निष्कर्ष लागू कानून के अनिवार्य प्रावधानों के विपरीत होने के कारण त्रुटिपूर्ण था, या यदि यह न्यायालय द्वारा की गई किसी घोषणा के आधार पर एक सुस्थापित स्थिति थी, या अग्राह्य साक्ष्य पर आधारित था, या बिना साक्ष्य के प्राप्त किया गया था। इस न्यायालय ने निम्नानुसार व्यवस्था दी: (SCC पृ. 725, कंडिका 5)

> "5. यह उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में नहीं है कि वह उन आधारों की जांच करे जिन पर तथ्यों के अंतिम न्यायालय (जो कि प्रथम अपीलीय न्यायालय है) द्वारा निष्कर्ष प्राप्त किए गए थे। यह सत्य है कि अधीनस्थ अपीलीय न्यायालय को सामान्यतः विश्वसनीयता के संबंध में विचारण न्यायालय द्वारा स्वीकार किए गए गवाहों को अस्वीकार नहीं करना चाहिए, लेकिन जहाँ उसने विचारण न्यायालय द्वारा स्वीकार किए गए गवाहों को अस्वीकार कर दिया है, वहां भी द्वितीय अपील में हस्तक्षेप का कोई आधार नहीं बनता जब यह पाया जाता है कि अपीलीय न्यायालय ने ऐसा करने के लिए संतोषजनक कारण दिए थे। ऐसे मामले में जहाँ दी गई परिस्थितियों के समूह से दो निष्कर्ष संभव हों, अधीनस्थ अपीलीय न्यायालय द्वारा निकाला गया निष्कर्ष द्वितीय अपील में उच्च न्यायालय पर बंधनकारी होता है। कोई अन्य दृष्टिकोण अपनाना अनुमेय नहीं है। उच्च न्यायालय प्रथम अपीलीय न्यायालय की राय के स्थान पर अपनी राय प्रतिस्थापित नहीं कर सकता, जब तक कि यह न पाया जाए कि अधीनस्थ अपीलीय न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्ष लागू कानून के अनिवार्य प्रावधानों या सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गई घोषणाओं के आधार पर सुस्थापित स्थिति के विपरीत होने के कारण त्रुटिपूर्ण थे, या अग्राह्य साक्ष्य पर आधारित थे या बिना किसी साक्ष्य के प्राप्त किए गए थे।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

27. 'संतोष हजारी बनाम पुरुषोत्तम तिवारी' [(2001) 3 SCC 179] के एक अन्य निर्णय में, इस न्यायालय ने निम्नानुसार

व्यवस्था दी: (SCC पृ. 187–88, कंडिका 14)

"14. कानून का वह बिंदु जिसके संबंध में दो मत संभव न हों, कानून का एक प्रस्ताव तो हो सकता है लेकिन वह 'विधि का सारवान प्रश्न' नहीं हो सकता। 'सारवान' होने के लिए, विधि का प्रश्न विवादास्पद होना चाहिए, जो देश के कानून या किसी बंधनकारी नजीर द्वारा पहले से तय न किया गया हो, और जिसका मामले के निर्णय पर भौतिक प्रभाव पड़ता हो, चाहे वह किसी भी पक्ष के पक्ष में तय किया जाए, जहाँ तक इसमें शामिल पक्षकारों के अधिकारों का संबंध है। मामले में 'अंतर्निहित' विधि का प्रश्न होने के लिए, पहले अभिवचनों में उसका आधार होना चाहिए और वह प्रश्न तथ्यों के न्यायालय द्वारा प्राप्त तथ्यों के पुष्ट निष्कर्षों से उभरना चाहिए, तथा मामले के न्यायसंगत और उचित निर्णय के लिए विधि के उस प्रश्न का निर्णय करना आवश्यक होना चाहिए। उच्च न्यायालय के समक्ष पहली बार उठाया गया पूर्णतः नया बिंदु मामले में शामिल प्रश्न नहीं माना जाता जब तक कि वह मामले की जड़ से न जुड़ा हो। इसलिए, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा कि विधि का कोई प्रश्न सारवान है और मामले में अंतर्निहित है या नहीं; सर्वोपरि विचार यह है कि सभी चरणों में न्याय करने के अनिवार्य दायित्व और किसी भी वाद के जीवन को लंबा खींचने से बचने की आवश्यकता के बीच एक विवेकपूर्ण संतुलन बनाया जाए।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

28. हाल ही में 'राजस्थान राज्य बनाम शिव दयाल' [(2019) 8 SCC 637 : (2019) 4 SCC (Civ) 203] के एक अन्य निर्णय में, यह माना गया कि तथ्यों का समवर्ती निष्कर्ष बंधनकारी होता है, जब तक कि यह न बताया जाए कि यह अभिवचनों से परे दर्ज किया गया था या यह किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं था या अभिलेखों और दस्तावेजों की सामग्री के गलत अर्थान्वयन पर आधारित था। न्यायालय ने निम्नानुसार

व्यवस्था दी: (SCC पृ. 640, कंडिका 16)

"16. जब द्वितीय अपील में तथ्यों के किसी समवर्ती निष्कर्ष को चुनौती दी जाती है, तो अपीलार्थी यह बताने का हकदार होता है कि यह विधि की दृष्टि में दोषपूर्ण है क्योंकि यह अभिवचनों से परे दर्ज किया गया था, या यह किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं था, या यह महत्वपूर्ण दस्तावेजी साक्ष्य के गलत अर्थान्वयन पर आधारित था, या यह विधि के किसी प्रावधान के विरुद्ध दर्ज किया गया था, और अंततः, यह निर्णय ऐसा है जिस पर न्यायिक रूप से कार्य करने वाला कोई भी न्यायाधीश उचित रूप से नहीं पहुँच सकता था। (देखें विद्वान न्यायाधीश विवियन बोस, न्यायाधीश , जब वे नागपुर उच्च न्यायालय के न्यायाधीश थे, द्वारा 'राजेश्वर विश्वनाथ मामिद्वार बनाम दशरथ नारायण चिलवेलकर' [1942 SCC OnLine MP 26 : AIR 1943 Nag 117], AIR Nag कंडिका 43 में दी गई अवधारणा)।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

29. विद्वान उच्च न्यायालय ने उपरोक्त निर्णयों में निर्धारित परीक्षणों को संतुष्ट नहीं किया है। दोनों न्यायालयों, विचारण न्यायालय और विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय ने 'शाला त्याग प्रमाण पत्र' की जांच की है और यह निष्कर्ष दिया है कि ऐसे प्रमाण पत्र से जन्म तिथि सिद्ध नहीं होती है। यह संभव है कि उच्च न्यायालय विचारण न्यायालय के रूप में कार्य करते हुए एक अलग दृष्टिकोण अपना सकता था, लेकिन एक बार जब दो न्यायालयों ने ऐसा निष्कर्ष दे दिया है जो न तो महत्वपूर्ण दस्तावेजों के गलत अर्थान्वयन पर आधारित है, न ही विधि के किसी प्रावधान के विरुद्ध दर्ज किया गया है, और न ही यह कहा जा सकता है कि न्यायिक और उचित रूप से कार्य करने वाला कोई भी न्यायाधीश ऐसे निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकता था, तो यह नहीं कहा जा सकता कि उच्च न्यायालय ने त्रुटि की है। परिणामस्वरूप, उच्च न्यायालय के समक्ष विचार के लिए विधि का कोई सारवान प्रश्न उत्पन्न नहीं हुआ।

30. इस प्रकार, हम पाते हैं कि उच्च न्यायालय ने प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा यथा–पुष्ट विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज तथ्यों के निष्कर्ष में हस्तक्षेप करके विधि की त्रुटि की है। तथ्यों के निष्कर्षों में द्वितीय अपील में तब तक हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता, जब तक कि निष्कर्ष दोषपूर्ण न हों। उच्च न्यायालय तथ्यों के निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं कर सकता था।"

14. पूर्वगामी चर्चाओं, अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य और ऊपर संदर्भित निर्णयों के आलोक में, इस न्यायालय की राय में, प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा दर्ज किया गया निष्कर्ष तथ्यों और साक्ष्यों के उचित मूल्यांकन पर आधारित है, अतः इसमें इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। इस अपील में विधि का कोई सारवान प्रश्न निहित नहीं है। तदनुसार इसे प्रारंभिक स्तर पर खारिज किया जाता है।

15. यद्यपि , यह स्पष्ट किया जाता है कि यह विचारण न्यायालय का कार्य है कि वह दोनों पक्षों द्वारा उठाए जाने वाले सभी बिंदुओं पर विवाद्यक विरचित करे और उसके बाद विचारण के दौरान संबंधित पक्षों द्वारा अभिलेख पर लाए जाने वाले उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर वाद का निर्णय करे।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

सही /–

(पार्थ प्रतीम साहू)
न्यायाधीश

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)
अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।